इकाई 26 पूर्वकृदन्त प्रकरण (तृतीय भाग) (लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे से पुवः संज्ञायाम् सूत्र तक)

इकाई की रूपरेखा

26.0 उद्देश्य

26.1 प्रस्तावना

26.2 पूर्वकृदन्त प्रकरण (तृतीय भाग) के सूत्र, वृति, सूत्रार्थ, उदाहरण, व्याख्या और रूपसिद्धि (लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे सूत्र से पुवः संज्ञायाम् सूत्र पर्यन्त)

26.3 सारांश

26.4 शब्दावली

26.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

26.6 अभ्यास प्रश्न

26.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे सूत्र से लेकर पूर्वकृदन्त प्रकरण की समाप्ति तक के अध्ययन के माध्यम से सूत्र, सूत्रार्थ एवं उदाहरणों से परिचित हो सकेंगे;
- शतृ, शानच्, वसु, तृन्, षाकन्, उ, क्विप्, ष्ट्रन् जैसे कृत् प्रत्ययों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे;
- सत् संज्ञा किन प्रत्ययों की होती है और वे प्रत्यय किस अर्थ में विहित होते हैं? यह भी जान सकेंगे;
- प्रत्यय के आदि में स्थित षकार की इत् संज्ञा कैसे होती है, यह भी जान सकेंगे;
- इस इकाई के अध्ययन से शतृ और शानच् प्रत्ययों के रूपों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे;
- इन प्रत्ययों से सम्बन्धित प्रक्रिया का ज्ञान भी इस पाठ के माध्यम से हो सकेगा; तथा
- इन प्रत्ययों से बने कृदन्त पदों का भाषा में प्रयोग करने में समर्थ हो सकेंगे।

26.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने पूर्वकृदन्त प्रकरण के द्वितीय भाग के अन्तर्गत आने वाले खश्, क्वनिप्, ङ, क्त, क्तवतु, कानच् और क्वसु इन सात प्रत्ययों का भली–भाँति परिचय प्राप्त किया था। अब हम इस इकाई में हम पूर्वकृदन्त प्रकरण के तृतीय भाग की चर्चा करेंगे। यहाँ विशेष रूप

से ध्यान रखने की बात यह है कि इस इकाई में आने वाले प्रत्ययों की केवल कृत् संज्ञा होगी कृत्य संज्ञा नहीं।

इस प्रकार वर्तमान तृतीय इकाई में हम इस प्रकरण के अन्तर्गत आने वाले लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे 3/2/124 सूत्र से लेकर पूर्वकृदन्त प्रकरण की समाप्ति पर्यन्त चर्चा करेंगे। इस प्रकार इन दोनों सूत्रों के मध्य आने वाले समस्त सूत्रों तथा उनसे विभिन्न अर्थों में होने वाले प्रत्ययों की समालोचना विस्तार पूर्वक प्रकृत इकाई के माध्यम से की जा रही है।

जैसा कि हम जान चुके हैं कि कृत् प्रत्यय सामान्यतः धातु मात्र से विहित होते हैं परन्तु बहुधा किसी शब्द विशेष अथवा उपसर्गों के उपपद में होने पर ही इन प्रत्ययों का धातु से विधान होना सम्भव हो पाता है। ऐसे विशिष्ट स्थलों का परिचय भी इस इकाई के अध्ययन के द्वारा हमें प्राप्त हो सकेगा। इसके साथ ही इस इकाई को पढ़ने के बाद निष्ठा संज्ञा, निष्ठा संज्ञक प्रत्ययों एवं तत्सम्बद्ध अथवा तदाश्रित कार्यों से भी हमारा परिचय सम्भव हो पायेगा। एवं प्रकारेण इस इकाई के अन्तर्गत खश्, क्वनिप्, ड, क्त, क्तवतु, कानच् और क्वसु प्रत्ययों की चर्चा की जायेगी। इसके साथ ही इन कृत् प्रत्ययों के संयोजन से निष्पन्न होने वाले शब्दों की प्रक्रिया भी प्रकृत पाठ में प्रदर्शित की जायेगी।

26.2 पूर्वकृदन्त प्रकरण (तृतीय भाग) के सूत्र, वृति, सूत्रार्थ, उदाहरण, व्याख्या और रूपसिद्धि (लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे सूत्र से पुवः संज्ञायाम् सूत्र पर्यन्त)

सूत्र – लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे 3/2/124

वृत्ति – अप्रथमान्तेन समानाधिकरणे लट एतौ वा स्तः। शबादिः।

सूत्रार्थ – अप्रथमान्त पदों के साथ यदि लट् का समानाधिकरण हो तो लट् के स्थान पर शतृ और शानच् प्रत्यय आदेश होते हैं।

उदाहरण – पचन्तं चैत्रं पश्य।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। लटः यह षष्ठी एकवचन का पद है। शतृशानचौ यह प्रथमा द्विवचन का पद है। अप्रथमासमानाधिकरणे यह सप्तमी एकवचन का पद है।

समानाधिकरण से तात्पर्य यह है कि लट् लकार और कारक की एक ही विभक्ति हो। परस्मैपदी धातुओं से शतृ, आत्मनेपदी धातुओं से शानच् तथा उभयपदी से दोनों प्रत्यय होते है। शानच् की तङानावात्मनेपदम् से आत्मनेपदसंज्ञा होती है। शतृ और शानच् प्रत्यय में अनुबन्ध लोप के बाद अत् और आन शेष रहता है। शित् (शकार की इत् संज्ञा) होने के कारण ये दोनों प्रत्यय सार्वधातुक संज्ञक हैं। अतः यहाँ सार्वधातुक सम्बन्धी धातु के गण की व्यवस्था के

अनुसार शबादि विकरण कार्य भी होते हैं। जैसे – भ्वादिगण की भू आदि धातुओं से शप् विकरण आकर भू+शप+शतृ (अत्) = भवत्। इसी प्रकार दिवादिगण की धातु के साथ श्यन्, स्वादि से श्नु आदि विकरण आयेंगे। शतृ में ऋकार की इत्संज्ञा का फल उगिदचां सर्वनामस्थाने धातोः से नुम् आगम आदि करना है। शानच् में शकार और चकार इत्संज्ञक है अतः आन शेष रहता है।

इस प्रकार इस सूत्र का अर्थ यह प्राप्त होता है कि – अप्रथमान्त (प्रथमान्त से भिन्न) अर्थात् द्वितीयान्त आदि पदों के साथ यदि लट् लकार का समानाधिकरण हो (यानी दोनों का अधिकरण अर्थात् वाच्य समान अर्थात् अभिन्न रहे) तो लट् के स्थान पर शतृ और शानच् प्रत्यय आदेश होते हैं।

(शतृ) – पचन्तं चैत्रं पश्य – पच् (डुपचष् पाके) धातु से कर्तृवाच्य में लट् लकार हुआ। पच्+लट् यहाँ पर लट् का वाच्य वही है जो 'चैत्रम्' इस द्वितीयान्त पद का है अतः अप्रथमान्त के साथ समान अर्थात् अभिन्न अधिकरण वाला होने के कारण लट् के स्थान पर 'लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे' इस सूत्र से शतृ और शानच् आदेश होते हैं। यहाँ पर शतृ हुआ। पच्+शतृ इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। पच्+अत् इस स्थिति में प्रत्यय का शेष जो अत् वह शित् होने के कारण 'कर्तरि शप्' सूत्र से शप् विकरण तथा अनुबन्धों का लोप हुआ। पच्+अ+अत् इस अवस्था में वर्ण–सम्मेलन हुआ। पचत् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर पचन्तम् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – आने मुक् 7/2/82

वृत्ति – अदन्ताङ्गस्य मुमागमः स्यादाने परे। लडित्यनुवर्तमाने पुनर्लङ्ग्रहणात् प्रथमासामानाधिकरण्येऽपि क्वचित्। सन् द्विजः।

सूत्रार्थ – आन (शानच् का शेष आन) प्रत्यय परे रहते अदन्त अङ्ग को मुम् का आगम होता है। लट् का अनुवर्तन सम्भव होने पर भी पुनः लट् के ग्रहण से यह ज्ञापित होता है कि कहीं–कहीं प्रथमासमानाधिकरण होने पर भी सन् द्विजः जैसे प्रयोगों में उपर्युक्त प्रत्यय हो जाते हैं।

उदाहरण – पचमानं चैत्रं पश्य।

व्याख्या – यह आगम विधायक विधि सूत्र है। आने यह सप्तमी एकवचन का पद है। मुक् यह प्रथमा एकवचन का पद है। मुक् में आदि मकार शेष रहता है उकार और ककार का अनुबन्धलोप हो जाता है। कित् होने के कारण आद्यन्तौ टकितौ के नियमन से अदन्त के अन्त में होगा।

लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे इस सूत्र में विद्यमान लटः इस पद की आवश्यकता के विषय में चर्चा करते हुए वृत्तिकार कहते हैं– कि वर्तमाने लट् इस पूर्व सूत्र से लट् की अनुवृत्ति लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे इस सूत्र में आ सकती थी। फिर भी इस सूत्र

में लटः पद का पुनः पढना यह सूचित करता है कि कहीं–कहीं प्रथमासमानाधिकरण होने पर भी सन् द्विजः जैसे प्रयोगों में उपर्युक्त प्रत्यय हो जाते हैं। सन् द्विजः इस प्रयोग के सन् इस पद में शतृ प्रत्यय हुआ है। अस् धातु से शतृ करने पर श्नसोरल्लोपः से अस् के अकार का लोप करके प्रथमा के एक वचन में सन् बनता है।

(शानच्) – पचमानं चैत्रं पश्य – पच् (डुपचष् पाके) धातु से कर्तृवाच्य में लट् लकार हुआ। पच्+लट् यहाँ पर लट् का वाच्य वही है जो 'चौत्रम्' इस द्वितीयान्त पद का है अतः अप्रथमान्त के साथ समान अर्थात् अभिन्न अधिकरण वाला होने के कारण लट् के स्थान पर 'लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे' इस सूत्र से शतृ और शानच् आदेश होते हैं। यहाँ पर शानच् हुआ। पच्+शानच् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। पच्+आन इस स्थिति में शबादि कार्य हुआ। पच+आन इस स्थिति में आन के परे रहते अदन्त अङ्ग को मुक् का आगम हुआ। पच+मुक्+आन इस स्थिति में मुक् के उकार तथा ककार का अनुबन्धलोप हुआ। पच्+म्+आन इस स्थिति में वर्ण–सम्मेलन हुआ। पचमान इस अवस्था में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर पचमानम् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – विदेः शतुर्वसुः 7/1/36

वृत्ति – वेत्तेः परस्य शतुर्वसुरादेशो वा।

सूत्रार्थ –विद् (जानना) धातु से परे शतृ के स्थान पर विकल्प से वसु आदेश होता है।

उदाहरण – विदन्। विद्वान्।

व्याख्या – यह आदेश विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में विदेः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। शतुः यह षष्ठी एकवचन का पद है। वसुः यह प्रथमा एकवचन का पद है। वसु में उकार की इत्संज्ञा होती है, वस् शेष रहता है।

–

(वसु पक्ष में) विद्वान् – विद् धातु से परे लट् के स्थान पर 'लटः शतृशानचावप्रथमासमानाधिकरणे' सूत्र से शतृ प्रत्यय हुआ। विद्+शतृ इस स्थिति में अनुबन्धलोप हुआ। विद्+अत् इस स्थिति में शप् विकरण तथा अदादि गण पठित धातु होने के कारण शप् का लोप हुआ। विद्+अत् इस स्थिति में 'विदेः शतुर्वसुः' इस सूत्र से विद् धातु से परे शतृ सम्बन्धी अत् के स्थान पर विकल्प से वसु आदेश हुआ। विद्वसु इस स्थिति में वसु सम्बन्धी अन्त्य उकार का अनुबन्धलोप हुआ। विद्वस् इस स्थिति में स्वादि की उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर विद्वान् यह रूप सिद्ध हुआ।

(शतृ पक्ष में) विदन् – वसु आदेश वैकल्पिक है अतः जिस पक्ष में शतृ को वसु आदेश नहीं होगा उस पक्ष में शतृ प्रत्यय होकर विद्+शतृ हुआ। पुनः अनुबन्धादि कार्य तथा शतृ की सार्वधातुक संज्ञा, शप्, अदादिगणीय धातु होने का कारण उसका लुक् करके विद्+अत् =

विदत् बना। पुनः प्रातिपदिक सञ्ज्ञा, स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर विदन् यह रूप बना।

सूत्र – तौ सत् 3/2/127

वृत्ति – तौ शतृशानचौ सत्संज्ञौ स्तः।

सूत्रार्थ – शतृ और शानच् की सत् संज्ञा होती है।

व्याख्या – यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र में तौ यह प्रथमा द्विवचन का पद है। सत् यह प्रथमा एकवचन का पद है। जिस तरह निष्ठा कहने से क्त और क्तवतु प्रत्यय का ज्ञान हो जाता है, उसी प्रकार सत् कहने से शतृ और शानच् का बोध होगा। अर्थात् शतृ और शानच् को सत् कहा जाता है। सत्–संज्ञा का उपयोग लृटः सद्वा आदि सूत्रों में किया जायेगा।

सूत्र – लृटः सद्वा 3/3/14

वृत्ति – व्यवस्थितविभाषेयम्। तेनाप्रथमासमानाधिकरण्ये प्रत्ययोत्तरपदयोः सम्बोधने लक्षणहेत्वोश्च नित्यम्।

सूत्रार्थ – लृट् के स्थान पर सत् संज्ञक (शतृ और शानच्) विकल्प से आदेश होते हैं।

उदाहरण – करिष्यन्तं करिष्यमाणं पश्य।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में लृटः यह षष्ठी एकवचन का पद है। सत् यह प्रथमा एकवचन का पद है। वा यह अव्यय पद है। यह व्यवस्थित विभाषा है। इस कारण अप्रथमासामानाधिकरण्य में तथा प्रत्यय व उत्तरपद के परे रहते सम्बोधन, लक्षण और हेतु में नित्य ही सत् संज्ञक प्रत्यय हो जाते हैं।

करिष्यन्तम् – कृ धातु से कर्तृ विवक्षा में भविष्यत्सामान्य अर्थ में लृट् लकार हुआ तथा लृट् सम्बन्धी अन्य कार्य होकर करिष्य+लृट् बना। इस अवस्था में 'लृटः सद् वा' सूत्र से शतृ प्रत्यय हुआ। करिष्य+शतृ इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। करिष्य+अत् इस स्थिति में करिष्य+अत् इस अवस्था में 'अतो गुणे' सूत्र से पूर्व रूप होकर करिष्य+त् बना। करिष्यत् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर करिष्यन्तम् यह रूप सिद्ध हुआ।

करिष्यमाणम् – कृ धातु से कर्तृ विवक्षा में भविष्यत्सामान्य अर्थ में लृट् लकार हुआ तथा लृट् सम्बन्धी अन्य कार्य होकर करिष्य+लृट् बना। इस अवस्था में 'लृटः सद् वा' सूत्र से शानच् प्रत्यय हुआ। करिष्य+शानच् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। करिष्य+आन इस स्थिति में आन के परे रहते अदन्त अङ्ग को मुक् का आगम हुआ। करिष्य+मुक्+आन इस स्थिति में मुक् के उकार तथा ककार का अनुबन्धलोप हुआ।

करिष्य+म्+आन इस स्थिति में वर्ण–सम्मेलन हुआ। करिष्यमान इस अवस्था प्रत्यय सम्बन्धी नकार को णकार आदेश तथा स्वादि कार्य होकर करिष्यमाणम् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – आक्वेस्तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु 3/2/134

वृत्ति – क्विपमभिव्याप्य वक्ष्यमाणाः प्रत्ययास्तच्छीलादिषु कर्तृषु बोध्याः।

सूत्रार्थ – इस सूत्र से लेकर आगे क्विप् प्रत्यय (3.2.177) तक जो प्रत्यय कहे जायेंगे वे सब तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता के अर्थ में होते हैं।

व्याख्या – यह अधिकार सूत्र है। इस सूत्र से प्रत्ययार्थ का अधिकार जाता है। इस सूत्र में आ यह अव्यय पद है। क्वेः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। तच्छीलतद्धर्मतत्साधुकारिषु यह सप्तमी बहुवचन का पद है।

इस प्रकार यह सूत्र कहता है कि यद्यपि कृत् प्रत्यय कर्तरि कृत् सूत्र से कर्ता अर्थ में होते है, फिर भी इस सूत्र के अधिकार होने से वे प्रत्यय केवल कर्ता अर्थ में न हो कर तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी अर्थ वाले कर्ताओं में ही होंगे अन्य कर्ताओं से नहीं।

तच्छील – उस धातु के अर्थ के स्वभाव वाला।

तद्धर्म – उस धातु के अर्थ के धर्म वाला।

तत्साधुकारी – उस धातु के अर्थ के अनुसार उत्तम कर्म करने वाला।

सूत्र – तृन् 3/2/135

सूत्रार्थ – तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता अर्थ में धातु से तृन् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – कर्ता कटान्।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में तृन् यह प्रथमा एकवचन का पद है। तृन् प्रत्यय में अन्त्य नकार का अनुबन्धलोप हो जाता है, अतः तृच् के समान ही इस प्रत्यय में भी तृ शेष रहता है।

कर्ता कटान् – (करोति तच्छीलः) कृ धातु से परे तच्छील अर्थ में 'तृन्' सूत्र से तृन् प्रत्यय हुआ। कृतृ न् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अन्त्य नकार का अनुबन्धलोप हुआ। कृ+तृ इस स्थिति में 'आर्धधातुकं शेषः' सूत्र से तृ की आर्धधातुक संज्ञा हुई। आर्धधातुक प्रत्यय परे रहते 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से इगन्त अङ्ग कृ के ऋकार को गुण व रपर होकर अर् हुआ। क्+अर्+तृ इस स्थिति में वर्ण–सम्मेलन करने से कर्तृ बना। तत्पश्चात् प्रातिदिक संज्ञा और प्रथमा विभक्ति एकवचन में सु प्रत्यय हुआ। इसके बाद ऋकारान्त शब्द सम्बन्धी अन्य कार्य होकर कर्ता यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन् 3/2/155

सूत्रार्थ – जल्प, भिक्ष, कुट्ट, लुण्ट और वृङ् धातुओं से तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता अर्थ में षाकन् प्रत्यय होता है।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में जल्पभिक्षकुट्टलुण्टवृङः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। षाकन् यह प्रथमा एकवचन का पद है।

सूत्र – षः प्रत्ययस्य 1/2/6

वृत्ति – प्रत्ययस्यादिः ष इत्संज्ञः स्यात्।

सूत्रार्थ – प्रत्यय के आदि में विद्यमान जो षकार उसकी इत् संज्ञा होती है।

उदाहरण – जल्पाकः। भिक्षाकः। कुट्टाकः। लुण्टाकः। वराकः। वराकी।

व्याख्या – यह संज्ञा सूत्र है। इस सूत्र में षः यह प्रथमा बहुवचन का पद है। प्रत्ययस्य यह षष्ठी एकवचन का पद है। षाकन् प्रत्यय में आक शेष रहता है। आदि षकार की षः प्रत्ययस्य इस सूत्र से इत् संज्ञा तथा अन्त्य हल् नकार की हलन्त्यम् सूत्र से इत् संज्ञा हो कर तस्य लोपः से लोप होने से आक शेष बचता है।

जल्पाकः – जल्प् (व्यक्तायां वाचि) धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन्' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। जल्प+षाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। जल्प्+आक इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर जल्पाकः यह रूप सिद्ध हुआ।

भिक्षाकः – भिक्ष् धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन्' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। भिक्ष्+षाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। भिक्ष्+आक इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर भिक्षाकः यह रूप सिद्ध हुआ।

कुट्टाकः – कुट्ट् धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन्' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। कुट्ट्+षाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। कुट्ट्+आक इस स्थिति में स्वादि+उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर कुट्टाकः यह रूप सिद्ध हुआ।

लुण्टाकः – लुण्ट् धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन्' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। लुण्ट्षाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ

तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। लुण्ट्आक इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर लुण्टाकः यह रूप सिद्ध हुआ।

वराकः – वृ धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन्' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। वृषाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। वृ+आक इस स्थिति में आर्धधातुक प्रत्यय परे होने के कारण धातु के ऋकार को गुण हुआ। व्+अर+आक इस स्थिति में वर्ण–सम्मेलन तथा स्वादि कार्य होकर वराकः यह रूप सिद्ध हुआ।

वराकी – वृ धातु से परे तच्छीलादि कर्ता अर्थ में 'जल्प–भिक्ष–कुट्ट–लुण्ट–वृङः षाकन' सूत्र से षाकन् प्रत्यय हुआ। वृ+षाकन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी आदिस्थ षकार की 'षः प्रत्ययस्य' सूत्र से इत् संज्ञा हुई तथा 'तस्य लोपः' सूत्र से इत्संज्ञक वर्ण षकार का लोप हुआ तथा अन्य अनुबन्धों का भी लोप हुआ। वृ+आक इस स्थिति में आर्धधातुक प्रत्यय परे होने के कारण धातु के ऋकार को गुण हुआ। व्+अर्+आक इस स्थिति में षाकन् प्रत्यय सम्बन्धी आक षित् होने के कारण स्त्रीत्व की विवक्षा में 'षिद्गौरादिभ्यश्च' सूत्र से ङीप् प्रत्यय हुआ। वराक+ङीप् इस स्थिति में ङीप् के अनुबन्धों का लोप हुआ। वराक+ई इस स्थिति में ईकारादि प्रत्यय के परे रहते 'यस्येति च' सूत्र से ककारोत्तरवर्ती अकार का लोप होकर वराकी बना। तत्पश्चात् स्वादि कार्य होकर वराकी यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – सनाशंसभिक्षः 3/2/168

सूत्रार्थ – सन्नन्त, आशंस् और भिक्ष् धातुओं से तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता अर्थ में उ प्रत्यय होता है।

उदाहरण – अ चिकीर्षुः। आशंसुः। भिक्षुः।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में सनाशंसभिक्षः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। उः यह प्रथमा एकवचन का पद है।

चिकीर्षुः – कृ (डुकृञ् करणे) धातु का सन्नन्त रूप चिकीर्ष बनता है। इसकी भी धातु संज्ञा होती है। अतः सन्नन्त चिकीर्ष धातु से परे 'सनाशंसभिक्ष उः' सूत्र से तच्छीलादि कर्ता अर्थ में उ प्रत्यय हुआ। चिकीर्ष+उ इस स्थिति में 'अतो लोपः' इस सूत्र से सन् सम्बन्धी अकार का लोप हुआ। चिकीर्ष+उ इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर चिकीर्षुः यह रूप सिद्ध हुआ।

आशंसुः – आङ् उपसर्ग पूर्वक शसि (इच्छायाम्) धातु को इदित्त्वाद् नुम् आगम तथा अपदान्त नकार को अनुस्वार होकर आशंस् बना। अतः आशंस् धातु से परे 'सनाशंसभिक्ष उः' सूत्र से तच्छीलादि कर्ता अर्थ में उ प्रत्यय हुआ। आशंस्+उ इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर आशंसुः यह रूप सिद्ध हुआ।

भिक्षुः – भिक्ष् (भिक्षायामलाभे लाभे च) धातु से परे 'सनाशंसभिक्ष उः' सूत्र से तच्छीलादि कर्ता अर्थ में उ प्रत्यय हुआ। भिक्ष्+उ इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर भिक्षुः यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपृजुग्रावस्तुवः क्विप् 3/2/177

सूत्रार्थ – भ्राज्, भास्, धुर्व, द्युत्, ऊर्ज्, पृ, जु और ग्राव–पूर्वक स्तु धातुओं से तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता अर्थ में क्विप् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – विभ्राट्। भाः।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में भ्राजभासधुर्विद्युतोर्जिपृजुग्रावस्तुवः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। क्विप् यह प्रथमा एकवचन का पद है। क्विप् का सर्वापहारी लोप हो जाता है यह पहले भी बताया जा चुका है। अब प्रश्न यह होता है कि जब प्रत्यय का पूर्ण रूप से लोप ही करना है तो उसका विधान ही क्यों करते हैं? इस प्रश्न का समाधान यह है कि क्विप् प्रत्यय होने से उसका लोप होने बाद भी उसको मान कर धातु कृदन्त हो जाता है। धातु के कृदन्त बन जाने के फलस्वरूप प्रातिपदिक संज्ञा तथा उससे सम्बन्धित अन्य कार्य सम्भव हो जाते हैं। क्विप् प्रत्यय एक कित् (ककार की इत् संज्ञ वाला) प्रत्यय है, अतः कित् को मान कर सम्प्रसारण होता है तथा गुण और वृद्धि का निषेध भी होता है। पित् (पकार के इत्संज्ञक) होने के कारण तुक् आगम भी होता है।

विभ्राट् – वि उपसर्ग पूर्वक भ्राज् धातु से तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप्' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। वि+भ्राज्+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। वि़भ्राज् इस स्थिति स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे होने से सु का लोप हुआ। वि+भ्राज् में 'भ्रस्जसृजमृजयजराजभ्राजच्छशां षः' सूत्र से धातु के जकार को षकार आदेश हुआ। वि+भ्राष् इस स्थिति में 'झलां जशोऽन्ते' इस सूत्र से षकार को डकार हुआ तथा 'वाऽवसाने' से वैकल्पिक चर्त्व होकर डकार को टकार होकर विभ्राट् यह रूप सिद्ध हुआ।

भाः – भास् धातु से तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप्' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। भास्+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। भास् इस स्थिति स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे सु का लोप हुआ। भास् इस अवस्था में अन्त्य सकार को रूत्व विसर्ग होकर भाः यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – राल्लोपः 6/4/21

वृत्ति – रेफाच्छ्वोर्लोपः क्वौ झलादौ क्ङिति।

सूत्रार्थ – रेफ से परे छकार और वकार का लोप होता है, यदि क्विप् प्रत्यय परे हो तो अथवा झलादि कित्, ङित् प्रत्यय परे रहते।

उदाहरण – धूः। विद्यूत्। ऊर्क्। पूः। दृशिग्रहणस्यापकर्षाज्जवतेर्दीर्घः। जूः। ग्रावस्तुत्।

व्याख्या – यह लोप विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में राः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। लोपः यह प्रथमा एकवचन का पद है।

–

धूः – धुर्व् (हिंसायाम्) धातु से परे तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। धुर्व+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। धुर्व् इस स्थिति में 'राल्लोपः' सूत्र से रेफ से परे वकार का लोप हुआ। धुर् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे सु का लोप हुआ। धुर् इस अवस्था में 'र्वोरुपधाया दीर्घ इकः' सूत्र से उपधा में विद्यमान उकार को दीर्घ ऊकार हुआ। धूर् स्थिति में अन्त्य रकार को विसर्ग होकर धूः यह रूप सिद्ध हुआ।

विद्युत् – वि उपसर्ग पूर्वक द्युत् धातु से परे तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप्' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। भास्+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। वि+द्युत् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे सु का लोप होने के कारण लोप होकर विद्युत् यह रूप सिद्ध हुआ।

ऊर्क् – ऊर्ज् धातु से परे तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप् सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। ऊर्ज्+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। ऊर्ज् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे सु का लोप हुआ। उर्ज् इस स्थिति में जकार को कुत्व तथा चर्त्व होकर ऊर्क् यह रूप सिद्ध हुआ।

पूः – **पृ** (पालनपूरणयोः) धातु से परे तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप्' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। पृ+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। पृ इस स्थिति में 'उदोष्ठ्यपूर्वस्य' सूत्र से ऋकार को उत्व रपर होकर हुआ। पुर् इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा हलन्त से परे सु का लोप हुआ। पुर् इस स्थिति में 'र्वोरुपधाया दीर्घ इकः' सूत्र से उपधा में विद्यमान उकार को दीर्घ हुआ। पूर् इस अवस्था में अन्त्य रकार को विसर्ग होकर पूः यह रूप सिद्ध हुआ।

जूः – जु धातु पाठ में न होने के कारण इसे सौत्र माना जाता है। अतः जु धातु से परे तच्छीलादि कर्ता की विवक्षा होने पर प्रकृत 'भ्राज–भास–धुर्वि–द्युतोर्जि–पृ–जु–ग्रावस्तुवः क्विप्' सूत्र से क्विप् प्रत्यय हुआ। जु+क्विप् इस स्थिति में प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। उकार को निपातनात् दीर्घ हुआ। जू इस अवस्था में स्वादि कार्य होकर जूः यह रूप सिद्ध हुआ।

वार्तिक – क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च।

अर्थ – वच्, प्रच्छ्, आयत पूर्वक स्तु, कट पूर्वक प्रु, जु और श्रि इन छः धातुओं से तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी कर्ता अर्थ में क्विप् प्रत्यय होता है साथ ही इन धातुओं को दीर्घ होता है और सम्प्रसारण का अभाव भी होता है।

वक्तीति वाक् – वच् धातु से परे प्रकृत 'क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' वार्तिक से क्विप् प्रत्यय हुआ तथा धातु के अकार को दीर्घ आकार भी हुआ। वाच्+क्विप् इस स्थिति में क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। वाच् इस स्थिति में अन्य स्वादि कार्य होकर वाक् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – च्छ्वोः शूडनुनासिके च 6/4/8

वृत्ति – सतुक्कस्य छस्य वस्य च क्रमात् श् ऊठ् इत्यादेशौ स्तोऽनुनासिके क्वौ झलादौ च क्ङिति।

सूत्रार्थ – अनुनासिक हो आदि में जिसके ऐसे प्रत्यय, क्विप् प्रत्यय और झलादि कित् ङित् प्रत्यय में से कोई परे हो तो तुक् सहित छकार के स्थान पर श् आदेश होता है तथा वकार के स्थान पर ऊठ् आदेश होता है।

उदाहरण – पृच्छतीति प्राट्। आयतं स्तौतीति आयतस्तूः। कटं प्रवते कटप्रूः। श्रयति हरिं श्रीः।

व्याख्या – यह विधि सूत्र है। इस सूत्र में च्छ्वोः यह षष्ठी एकवचन का पद है। शूड् यह प्रथमा एकवचन का पद है। अनुनासिके यह सप्तमी एकवचन का पद है। च यह अव्यय पद है।

पृच्छतीति प्राट् – प्रच्छ् धातु से परे प्रकृत 'क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' वार्तिक से क्विप् प्रत्यय हुआ तथा धातु के अकार को दीर्घ आकार भी हुआ। प्रच्छ्+क्विप् इस स्थिति में क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। प्राच्छ् इस स्थिति में 'च्छ्वोः शूडनुनासिके च' इस सूत्र से क्विप् प्रत्यय का स्थानिवद्भाव मान कर धातु के च्छ् के स्थान में श् आदेश हुआ। प्राश् इस स्थिति में अन्य स्वादि कार्य होकर प्राट् यह रूप सिद्ध हुआ।

आयतं स्तौतीति आयतस्तूः – आयत इस कर्म के उपपद में रहते स्तु धातु से परे प्रकृत 'क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकट–प्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' वार्तिक से क्विप् प्रत्यय हुआ तथा धातु के उकार को दीर्घ ऊकार भी हुआ। आयत+स्तू+क्विप् इस स्थिति में क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। आयत+स्तू इस स्थिति में अन्य स्वादि कार्य होकर आयतस्तूः यह रूप सिद्ध हुआ।

कटं प्रवते कटप्रूः – कट कर्म के उपपद में रहते प्रु धातु से परे प्रकृत 'क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' वार्तिक से क्विप् प्रत्यय हुआ तथा

धातु के उकार को दीर्घ ऊकार भी हुआ। कट+प्रू+क्विप् इस स्थिति में क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। कट+प्रू इस स्थिति में अन्य स्वादि कार्य होकर कटप्रूः यह रूप सिद्ध हुआ।

श्रयति हरिं श्रीः – श्रि (श्रिञ् सेवायाम्) धातु से परे प्रकृत 'क्विब्बचिप्रच्छ्यायतस्तुकटप्रुजुश्रीणां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च' वार्तिक से क्विप् प्रत्यय हुआ तथा धातु के इकार को दीर्घ ईकार भी हुआ। श्री+क्विप् इस स्थिति में क्विप् प्रत्यय का सर्वापहारी लोप हुआ। श्री इस स्थिति में अन्य स्वादि कार्य होकर श्रीः यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – दाम्–नी–शस–यु–युज–स्तु–तुद–सि–सिच–मिह–पत–दश–नहः करणे 3/2/182

वृत्ति – दाबादेः ष्ट्रन् स्यात् करणेऽर्थे।

सूत्रार्थ – दाप्, नी, शस्, यु, युज्, स्तु, तुद्, सि, सिच्, मिह, पत्, दंश्, नह, इन धातुओं से परे करण अर्थ में ष्ट्रन् प्रत्यय होता है।

उदाहरण – दात्यनेन दात्रम्। नेत्रम्।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में दाम्नीशसयुयुजस्तुतुदसिसिचमिहपतदशनहः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। करणे यह सप्तमी एकवचन का पद है। ष्ट्रन् प्रत्यय में शेष त्र रहता है। आदि में स्थिति षकार तथा अन्त्य नकार का अनुबन्ध लोप हो जाता है। षकार के कारण ही ष्टुत्व सन्धि होने से त् को ट् हुआ था। अतः जब षकार का लोप हो जाता है तो ट् स्वतः त् में परिवर्तित हो जाता है।

दात्यनेन दात्रम् – दा (दाप् लवने) धातु से परे करण कारक की विवक्षा में 'दाम्–नी–शस–यु–युज–स्तु–तुद–सि–सिच–मिह–पत–दश–नहः करणे' इस सूत्र से ष्ट्रन् प्रत्यय हुआ। दा+ष्ट्रन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। दा+त्र इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर दात्रम् यह रूप सिद्ध हुआ।

नीयतेऽनेनेति नेत्रम् – नी (णीञ् प्रापणे) धातु से परे करण कारक की विवक्षा में 'दाम्–नी–शस–यु–युज–स्तु–तुद–सि–सिच–मिह–पत–दश–नहः करणे' इस सूत्र से ष्ट्रन् प्रत्यय हुआ। नी+ष्ट्रन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। नी+त्र इस स्थिति में आर्धधातुक प्रत्यय परे होने के कारण धातु के ईकार को 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से गुण होकर एकार हुआ। नेत्र इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर नेत्रम् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च 7/2/9

वृत्ति – एषां दशानां कृत्प्रत्ययानामिण् न।

सूत्रार्थ – ति, तु, त्र, त, थ, सि, सु, सर, क और स इन कृत्प्रत्ययों को इट् का आगम नहीं होता।

उदाहरण – शस्त्रम्। योत्रम्। योक्तम्। स्तोत्रम्। तोत्रम्। सेत्रम्। सेक्तम्। मेढ्रम्। पत्रम्। दंष्ट्रा। नद्धी।

व्याख्या – यह निषेधात्मक विधि सूत्र है। इस सूत्र में तितुत्रतथसिसुसरकसेषु यह सप्तमी एकवचन का पद है। च यह अव्यय पद है।

शसति (हिनस्ति) अनेनेति शस्त्रम् – शस् (शसु हिंसायाम्) धातु से परे करण कारक की विवक्षा में 'दाम्–नी–शस–यु–युज–स्तु–तुद–सि–सिच–मिह–पत–दश–नहः करणे' इस सूत्र से ष्ट्रन् प्रत्यय हुआ। शस्+ष्ट्रन् इस स्थिति में प्रत्यय सम्बन्धी अनुबन्धों का लोप हुआ। शस्त्र इस स्थिति में वलादि आर्धधातुक प्रत्यय परे होने के कारण 'आर्धधातुकस्येड् वलादेः' इस सूत्र से इट् आगम प्राप्त था परन्तु उसका 'तितुत्रतथसिसुसरकसेषु च' सूत्र से निषेध हो गया। शस्त्र इस स्थिति में स्वादि–उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर शस्त्रम् यह रूप सिद्ध हुआ।

सूत्र – अर्ति–लू–धू–सू–खन–सह–चर इत्रः 3/2/184

सूत्रार्थ – ऋ, लू, धू, सू, खन्, सह् और चर् धातुओं से करण अर्थ में इत्र प्रत्यय होता है।

उदाहरण – अरित्रम्। लवित्रम्। धुवित्रम्। सवित्रम्। खनित्रम्। सहित्रम्। चरित्रम्।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में अर्तिलूधूसूखनसहचरः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। इत्रः यह प्रथमा एकवचन का पद है।

अरित्रम् – ऋ (गतिप्रापणयोः) धातु से परे 'अर्ति–लू–धू–सू–खन–सह–चर इत्रः' इस सूत्र से इत्र प्रत्यय हुआ। ऋ+इत्र इस स्थिति में इत्र की आर्धधातुक संज्ञा होने के कारण 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से ऋ को गुण रपर होकर अर् हुआ। अर्+इत्र इस स्थिति में स्वादि– उत्पत्ति तथा तत्सम्बन्धी कार्य होकर अरित्रम् यह रूप सिद्ध हुआ।

लवित्रम्। धुवित्रम्। सवित्रम्। खनित्रम्। सहित्रम्। चरित्रम्। इनकी सिद्धि अरित्रम् के समान होती है।

सूत्र – पुवः संज्ञायाम् 3/2/185

सूत्रार्थ – यदि प्रकृति–प्रत्ययसमुदाय से संज्ञा अर्थ निकले तो पू धातु से करण अर्थ में इत्र प्रत्यय होता है।

उदाहरण – पवित्रम्।

व्याख्या – यह प्रत्यय विधायक विधि सूत्र है। इस सूत्र में पुवः यह पञ्चमी एकवचन का पद है। संज्ञायाम् यह सप्तमी एकवचन का पद है।

पवन्ते पुनन्ति वा अनेन पवित्रम् – पू (पूङ् अथवा पूञ्) धातु से परे करण अर्थ में प्रकृत 'पुवः संज्ञायाम्' सूत्र से इत्र प्रत्यय हुआ। पू+इत्र इस स्थिति में इत्र की आर्धधातुक संज्ञा होने के कारण 'सार्वधातुकार्धधातुकयोः' सूत्र से उ को गुण होकर ओ हुआ। पो+इत्र इस स्थिति में ओ को अच् परे रहते 'एचोऽयवायावः' सूत्र से अव् आदेश हुआ। पव्+इत्र इस स्थिति में वर्ण–सम्मेलन तथा स्वादि कार्य होकर पवित्रम् रूप सिद्ध हुआ।

26.3 सारांश

कृदन्त के अन्तर्गत आने वाले पूर्वकृदन्त प्रकरण से सम्बद्ध इस इकाई में आपने शतृ, शानच्, वसु, तृन्, षाकन्, उ, क्विप्, ष्ट्रन् और इत्र इन नौ प्रत्ययों का अध्ययन किया। ये नौ प्रत्यय भी कृदतिङ् इस अधिकार में पढ़े जाने के कारण कृत् संज्ञक कहलाते हैं। जैसा कि हम पूर्व की इकाइयों में पढ़ चुके हैं कि इन प्रत्ययों का कर्तरि कृत् सूत्र द्वारा कर्ता अर्थ में विधान होता है। परन्तु इस इकाई में अर्थ विशेष के कतिपय ऐसे उदाहरण भी दृष्टिगोचर हुए हैं जहाँ वर्तमान कालवाचक लट् लकार एवं भविष्यत् कालवाचक लृट् लकार के स्थान पर प्रत्यय का विधान हो रहा है। इस इकाई के सूत्रों से कर्ता अर्थ के अन्तर्गत तच्छील, तद्धर्म और तत्साधुकारी अर्थ में भी धातु से परे प्रत्ययों का विधान हुआ। इसके अतिरिक्त करणादि अर्थ में भी प्रत्ययों का विधान इस इकाई के अन्तर्गत आपने पढा है।

प्रथम, द्वितीय और तृतीय इकाई में हमारे द्वारा विस्तार पूर्वक पठित वाऽसरूप विधि का उपयोग इस इकाई में भी समान रूप से प्रासंगिक है चतुर्थ इकाई के अपने इस अध्ययन के द्वारा यह भी आप भलीभाँति जान चुके हैं।

26.4 शब्दावली

समानाधिकरण – समानाधिकरण का तात्पर्य एक अथवा समान–विभक्तिक होने से है। जैसे यहाँ लट् लकार उसके स्थान पर विधीयमान प्रत्यय एवं कारक दोनों का अधिकरण अर्थात् वाच्य समान अर्थात् अभिन्न हैं। अतः ये समानाधिकरण माने जाते हैं।

व्यवस्थितविभाषा – जो विकल्प कहीं पर नित्य, कहीं सर्वथा नहीं तथा किन्हीं स्थानों पर दोनों ही प्रकार से प्रवृत्त हो उसे व्यवस्थितविभाषा कहते हैं। वस्तुतः तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार विकल्प की सामान्यतया प्रत्येक स्थान पर प्रवृत्ति और अप्रवृत्ति होकर दो–दो रूप बनते दिखाई देते हैं, उसी प्रकार की प्रवृत्ति व्यवस्थितविभाषा के प्रसंग में नहीं देखी जाती है। व्याकरण परम्परा में व्यवस्थितविभाषा की व्यवस्था तो कहीं नित्य प्रवृत्ति वाली, कहीं नित्य अप्रवृत्ति वाली तथा कहीं उभयविध प्रवृत्ति वाली स्वीकार की जाती है। इस संदर्भ में यह बात भी विशेष रूप से ध्यातव्य है कि इस व्यवस्थितविभाषा के प्राप्ति का निर्णय शिष्ट प्रयोगों पर ही पूर्णतया आश्रित हुआ करता है किसी यदृक्षा पर नहीं।

सर्वापहारी लोप – जिस प्रत्यय के सभी वर्णों की इत् संज्ञा होकर उनका लोप हो जाता है। उस लोप को सर्वापहारी लोप कहा जाता है।

तच्छील कर्ता – फल की अपेक्षा किये विना अपने शील अर्थात् स्वभाव के अनुसार क्रिया का सम्पादन करने वाला तच्छील कर्ता कहलाता है।

तद्धर्मा कर्ता – शील अथवा स्वभाव न होने पर भी क्रिया को अपने कुल का आचार मानकर सम्पादित करने वाला तद्धर्मा कर्ता कहलाता है।

तत्साधुकारी कर्ता – शील अथवा कुलाचार न होने पर भी क्रिया को उत्तम प्रकार से सम्पादित करने वाला तत्साधुकारी कर्ता कहा जाता है।

26.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. वरदराजाचार्य, मूल लघुसिद्धान्तकौमुदी, गोरखपुर,: गीताप्रेस।
2. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या गोविन्दाचार्य, लघुसिद्धान्तकौमुद,. दिल्लीः चौखम्भा सुरभारती।
3. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, धरानन्द, लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्लीः मोतीलाल बनारसी दास।
4. वरदराजाचार्य, हिन्दी व्याख्या शास्त्री, भीमसेन, लघुसिद्धान्तकौमुदी, (भाग–1–6), दिल्लीः भैमी प्रकाशन।
5. शास्त्री, चारुदेव, व्याकरण चन्द्रोदय. (भाग–1–3), दिल्लीः मोतीलाल बनारसीदास।
6. वरदराजाचार्य, सम्पा. एवं हिन्दी, सिंह, सत्यपाल. लघुसिद्धान्तकौमुदी, दिल्लीः शिवालिक पब्लिकेशन।
7. Apte, V.S. The Students, Guide to Sanskrit Composition, Chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi.
8. Kale, M.R. Higher Sanskrit Grammar, MLBD, Delhi.
9. Kanshi Ram, Laghusiddhantkaumudi, (Vol. 1&3), MLBD, Delhi, 2009.
10. Ballantyne, James R. Laghusiddhantkaumudi, Chowkhamba Sanskrit Series, Varanasi

26.6 अभ्यास प्रश्न

1. शतृ और शानच् प्रत्यय में क्या अन्तर है?
2. शतृ प्रत्यय किन धातुओं से विहित होता है?

3. शानच् प्रत्यय विधान के लिए क्या क्या निमित्त हैं?
4. तृन् प्रत्यय किस अर्थ में होता है?
5. वसु प्रत्यय किस के स्थान पर होता है?
6. लिटः कानज्वा और क्वसुश्च इन दो सूत्रों को उदाहरण के साथ स्पष्ट करें।
7. पचन्तम् और पचमानम् की रूप सिद्धि कीजिए।
8. कर्ता पद की रूपसिद्धि कीजिए।
9. चिकीर्षुः में कौन सा प्रत्यय है? ससूत्र स्पष्ट कीजिए

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY